

आसो सुष्ट १३, सोमवार ता. १९-१०-१९६४
 श्री तारणस्वामी द्वारा रचित श्रावकाचार, गाथा-२३७,
 २४२, २४३, २४५, २५०थी २५२, २६२, २६६, २७२
 प्रथम-२३

...गाथा चलती है. २३७. गाथा-२३७. कल २३६ चल गयी.

दर्शनं सप्त तत्त्वानां, द्रव्यं कायं पदार्थकं।

जीव द्रव्यं च शुद्धं च, सार्थं शुद्ध दर्शनं॥२३७॥

देओ! पहले श्रावकको सम्यग्दर्शन शुद्ध होना चाहिए. सम्यग्दर्शनमें सप्त तत्त्व-जव, अजव, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष. ये सात पदार्थ, सात तत्त्वोंकी बराबर श्रद्धा होनी चाहिए. वह सम्यग्दर्शन है. सात तत्त्वकी... समझमें आया? सात तत्त्वकी श्रद्धा भेदवाली श्रद्धा है. सूक्ष्म बात है. समझमें आया?

‘दर्शनं सप्त तत्त्वानां’ सात भिन्न-भिन्न तत्त्व जैसे हैं वैसा श्रद्धान करना उसको व्यवहार समकित यानी कि वास्तविक समकित नहीं, (कलनेमें आता है). लेकिन जिसको अपना शुद्ध आत्मा.. है न? ‘जीव द्रव्यं च शुद्धं च, सार्थं शुद्ध दर्शनं’. जिसको आत्मा शुद्ध ज्ञायक परिपूर्णा आनंद (स्वरूप है), ऐसी अंतरकी दृष्टि निर्विकल्प श्रद्धा, भान हुआ हो, यथार्थ शुद्ध दर्शन वह है. यथार्थ सम्यग्दर्शन वह है. पंडितज! थोडा व्याख्यान हो गया है पहले. ये साथमें आया है आज, पहले अके हो गया है. जैसे हो गया. कल अके बाकी है आपकी विनंतीमें. पंडितज विनंती है न. ... समझमें आया? उसमें कैसे अर्थ होता है? उसमें क्या है उसे पहले समझना चाहिए.

यहां अके गाथामें दो बात ली है. ‘दर्शनं सप्त तत्त्वानां’. अभी सात तत्त्व क्या है उसकी जबर नहीं हो. अजव अजवकी क्रिया करते हैं, दया, दानका परिणाम पुण्य है, हिंसा, जूठका भाव पाप है, आत्मा ज्ञायक भिन्न है.

मुमुक्षु :- इसमें ऐसा कहां आता है, इसमें सात तत्त्व...

उत्तर :- क्या आया?

मुमुक्षु :- नाम ज्ञान लिये.

उत्तर :- नाम ज्ञाना? सात तत्त्वानां-सात भाव. सात भाव. आत्मा ज्ञायक चैतन्य है और आत्माकी पर्यायमें दया, दान, व्रत, भक्तिका विकल्प उठता है, वह पुण्य है. हिंसा, जूठ, चोरी पाप है. दोनों मिलकर आस्रव है. आत्माका स्वभाव रागमें रुकता है उतना भावबंध है. कर्म, शरीर आदिकी क्रिया अजव है. वह अपनेसे होती नहीं. और अजव

कर्मसे मेरेमें आस्रव, विकार होता नहीं. जैसे सात तत्त्वकी भेदपूर्वक श्रद्धा करना उसका नाम व्यवहार सम्यग्दर्शन है. अर्थात् वह सम्यग्दर्शन सख्या नहीं है. समजमें आया?

छल द्रव्य. दूसरा बोल है न? पंडितज! छल द्रव्य. भगवान सर्वज्ञदेवने छल द्रव्य कहे. द्रव्यके नाम भी नहीं आते हो. ..वावज! छल द्रव्य किसको कहते हैं भगवान ज्ञाने. आते हैं नाम? नहीं. स्पष्ट बात करते हैं. डालखंडज! छल द्रव्यके नाम आते हैं कि नहीं? नहीं आते हो तो कोई बात नहीं. ... अब सीजना. उसमें क्या? सात तत्त्व... सबकी भिन्न-भिन्न व्याख्या है, हां! भिन्न-भिन्नकी श्रद्धा करनी उसका नाम व्यवहार समकित नाम शुभराग है. और छल द्रव्य. छल द्रव्य है न? उसमें द्रव्य है न? छल द्रव्य अर्थमें विभा है. छल द्रव्य. अनंत आत्मा वह जवद्रव्य. जैसे असंख्यात ... अनंत परमाणु पुद्गल द्रव्य. और धर्मास्ति, अधर्मास्ति, आकाश और काल. जैसे छल द्रव्य अनादिअनंत भगवानके ज्ञानमें आये हैं. छल द्रव्यको छल द्रव्यरूप यथार्थपने श्रद्धा करना वह व्यवहार समकित अर्थात् शुभराग है. शुभराग है. निश्चय समकित और धर्म नहीं. समजमें आया? जिसको ठतना भी ठिकाना नहीं है, सात तत्त्वकी श्रद्धाका ठिकाना नहीं, छल द्रव्य क्या है (मालूम नहीं)

काय-पंचास्तिकाय. उसमें काल निकाल दिया. कालमें अस्ति है परंतु काय नहीं. पंचास्तिकाय. काल है, असंख्य अणु है यौदह ब्रह्मांडमें. ओक-ओक अणुमें कालाणुमें अनंत-अनंत गुण है. जैसे असंख्य अणु पूरे लोकमें ओक-ओक आकाश प्रदेशमें रहे हैं. कालकी अस्ति है, परंतु समुदायके रूपमें काय नहीं है. उसके सिवा पांच काय (हैं). जवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय. ये पांच काय जैसे हैं ऐसी श्रद्धा करना, वह शुभराग रूपी व्यवहार समकित है. किसको? जिसको निश्चय सम्यग्दर्शन होता है उसको. समजमें आया?

पदार्थ-नौ पदार्थ है. देजो! सात तत्त्व, छल द्रव्य, पांच अस्तिकाय और नौ पदार्थ. नौ पदार्थ. सातमेंसे आस्रवमेंसे दो निकाले. पुण्य और पाप. नौ पदार्थ. भिन्न-भिन्न नौ हैं. पुण्य पाप नहीं, पाप पुण्य नहीं, आस्रव दो मिलकर भिन्न है, बंध भिन्न है, अजव भिन्न है, कर्म भिन्न है, आत्मा ज्ञायक भिन्न है, संवर-निर्जरा पर्याय अपनी शुद्धि वह भिन्न है. पुण्य-पापके परिणामसे संवर-निर्जरा आत्माके स्वभावसे उत्पन्न हो वह भिन्न है. जैसे नौकी नौ रूप भेदरूप श्रद्धान करना उसका नाम शुभराग, शुभ विकल्प, व्यवहार समकित कहते हैं. किसको?

'जीव द्रव्यं च शुद्धं च, सार्थं शुद्ध दर्शनं'. जिसके साथ जो ज्ञायक यिदानंद निर्विकल्प शुद्ध आत्मा, वह रागकी क्रिया करनेवाला नहीं, दया, दान आदि व्यवहार विकल्पका कर्तृत्व नहीं. सात तत्त्व द्रव्य आदि कहे, विकल्प उसका भी कर्तृत्व जिसमें नहीं है. जैसे अकेला आत्मा 'सार्थं शुद्ध' यथार्थ 'शुद्ध दर्शनं'. उसको यथार्थ शुद्ध दर्शन नाम निश्चय

सम्यग्दर्शन कलते हैं. समजमें आया? ये तो वहां बहुत परिययमें आते थे. संप्रदायमें आते थे कि नहीं?

देओ! अक गाथामें दो लिया है. समजमें आया? पहलेमें व्यवहार लिया, दूसरेमें निश्चय लिया. ... उसको नौ तत्व आदिका व्यवहार समकित कलनेमें आता है. सम्यक्. दो प्रकारका सम्यग्दर्शनका कथन है. सम्यग्दर्शन दो नहीं है. कथनमें दो है. तो अक प्रकार पहले लिया, दूसरा प्रकार दूसरे पदमें लिया. जिसको ज्वद्रव्य शुद्धं ज्ञायक अभंड निर्विकल्प राग विकल्पका कर्ता नहीं, देहकी क्रियाका कर्ता नहीं. ये तो सात तत्वमें आ गया. लेकिन यहां निर्विकल्प आत्मामें शुद्ध आत्माका अनुभवपूर्वक प्रतीति, भान होना वल यथार्थ शुद्ध दर्शन है. यथार्थ कलो कि निश्चय कलो. 'सार्थ' है न? 'सार्थ'. यथार्थ कलो कि निश्चय कलो. जिसको निश्चय सम्यग्दर्शन होता है उसको असा व्यवहार सम्यग्दर्शन होता है. निश्चय बिनाका अकेला व्यवहार पुण्यबंधका कारण है. उसमें कोठ व्यवहार समकितका आरोप भी देनेमें आता नहीं. समजमें आया? अभी सम्यग्दर्शन किसको कलते हैं (उसकी) जबर नहीं और कहांसे व्रत, नियम और क्रियाकांड आ गया? वल कलते हैं, देओ! २३७में आया न? सार-सार लेते हैं. २४५. २४५ है न?

अनृतं अचेत उत्पादं, मिथ्या माया लोकरंजन।

पाषंडी मूढ विश्वासं, नरय ते पतंति नरा।२४५।।

कडक भाषा है, सेठ! तारणस्वामी कडक है, कडक. यथार्थ हो वल तो कलना ही पडे. उसमें क्या? लोकमें क्या...? ठसलिये कलते हैं, देओ! लोकरंजन. लोकोका रंजन करनेमें अनुकूलता पडे असी बात करना, वल पाषंडी मूढ है. 'नरय ते पतंति नरा'. वल नर्कमें जायेगा. लोकरंजन-लोकोको अनुकूल (पडे असा कलना कि), दया, दान, भक्ति, व्रत, तप वल भी अक धर्म है. वल तो विकल्प है. वल भी धर्म है, असा मानते हैं, मनाते हैं, लोकोको राज रभते हैं, वल 'नरय ते पतंति' नर्कमें जायेगा. क्योकि भगवानके मार्गसे विरुद्ध द्रोही करते हैं. समजमें आया? वल बादमें आयेगा. २४६में आयेगा. समजमें आया? है शब्द? ऽलचंद्रं! है? देओ! 'अनृतं' बादमें आयेगा, अभी २४५की व्याख्या चलती है.

'अनृतं' मिथ्यात्व, अज्ञानको ही उत्पन्न करनेवाले हैं. मिथ्याश्रद्धा, ऽलवटी मान्यता. सर्वज्ञ वीतराग परमेश्वरसे अक भी शब्दका विरोध कले, अक अक्षरका लोकन्यायसे करे असा मिथ्यात्व अज्ञानको उत्पन्न करनेवाले. और स्वयं मिथ्यादृष्टि, मायाचार और लोकोको रंजयमान करनेमें लगे रहते हैं. सेठको, सबको अनुकूल लगाना. पैसेवाले हो, लैया! तुम तो पैसे जर्च करो. उसमें धर्म है. श्रावकका पूजा, दानमें धर्म है. मुनिओका दूसरा धर्म है. असे दृनियाको रंजन करनेवाला 'नरय ते पतंति' नर्कमें जायेगा. ऽलचंद्रं! लिभा है 'नरय ते पतंति'? मानव नर्कमें पडता है. पंचेन्द्रियका मलदुःख है. लोकोका रंजन करे, परंतु भगवानकी आज्ञासे विरुद्ध

होता है, उसकी जबर नहीं. सबको लवा मानना और सबको कटना. सेठको मज्जन लगाना. मज्जन लगाना समजते हो? यापवूसी. तुम बडे हो, बडे धर्मी हो, धूलमें भी लान नहीं है. पैसेवाला हो गया तो क्या धर्म हो गया? पांच-पचास लाज जर्ज करे तो धर्म हो गया? वह तो धूल है. वह तो कदाचित् राग मंद किया हो तो पुण्य है. धर्म-भर्म है नहीं. मंदिर दो बनवाया तो ओहो..हो..! तुम बडे धर्मी हो.

अक पंडितने कला था. राजकोटका ढाई लाजका मंदिर हुआ न? (संवत) २००६की सालमें. अक पंडित आया था. बडा मलोत्सव था. पांच-छह हजार लोग आये थे. राजकोटमें मंदिर हुआ था. अक पंडितने हमारे सेठको कला, तुम्हारे दादाको-नानावावलाई. नानावावलाईको कला था, सेठ! ... इतना जर्ज (किया), सवा लाज तो उसने जर्ज किया, सवा लाज, तुम सात-आठ लवमें मोक्ष ज्ञओगे. सेठने कला, हमारे महाराज असा नहीं कहते हैं. हम असा नहीं मानते. हमारे नानावावलाई थे न? ये मोहनलाईका पुत्र है, उसका बडा लाई. नानावावलाईको अक पंडितने कला, २००६की साल. बडा मलोत्सव, ढाई लाजका नया द्विगंबरका मंदिर (बना). यहां काठियावाडमें तो द्विगंबर मंदिर था ही नहीं. अक यहां लावनगर था और अक जूनागढ था. ओहो..! उपर सुवर्ण कलश. सेठ! तुम सात-आठ लवमें मोक्ष ज्ञओगे. हमारे महाराज ना कहते हैं. उससे मोक्ष हम तो नहीं मानते. हमारा जितना शुभलाव हुआ हो, उतना हमको पुण्य बंध ज्ञयेगा. सेठ! जितना हमारा राग मंद हुआ हो (उतना पुण्यबंध है). कांतिलाई है न? उसके पिताज था. तीनों लाई बहुत यहां (आते थे). अक ही वर्षमें तीनों चल बसे. हमारे यहां ... था. मोहनलाई उसके पिताज तो हमारे साथमें थे. बहुत प्रेम था. बहुत प्रेमी था. साथमें रहते हैं. तुम भी साथमें थे. साथमें थे. उसने कला कि, नहीं. लाज, सवा लाज जर्ज किया तो क्या आठ लवमें मोक्ष ज्ञते हैं? कौन कहता है?

असा मूढ मिथ्यादृष्टि दुनियाको रंजन करानेको असे पांच लाज-दस लजा जर्जे तो तुम्हारे धर्म लोगा, (असा) लोकरंजन करके लगवानकी आज्ञाका लोप करते हैं. समजमें आया? पंडितज! कडक बात है, हां! वह तो शास्त्रमें है.

मुमुक्षु :- कडक नहीं है, सखी है.

उत्तर :- असी है, असा है.

'पाषंडी मूढ विश्वास' देओ! पाषंडी साधुओंका विश्वास करते हैं. असी विपरीत मान्यता करनेवाला कोई भी गृहस्थ हो, उसका विश्वास करते हैं. देओ! उसका विश्वास करते हैं विपरीत मान्यता कहनेवाला. पुण्यमें धर्म है, किया करते-करते तुम्हें धर्म हो ज्ञयेगा, असा यहि कोई मनाता है और असा विश्वास करता है, असा विश्वास करनेवाला मानव नर्कमें ज्ञता है.

मुमुक्षु :- विश्वास करनेवाला..

उत्तर :- क्या है? 'पाषंडी मूढ विश्वासं, नरय ते पतंति नरा'. डालचंदल! पहले समझना. पहले चीज क्या है? मलान प्रभुका मार्ग, सर्वज्ञ त्रिलोकनाथ उससे अेक विद्द... अभी तो बहुत विरोध विरोध (चलता है). मालूम भी नहीं है कि विरोध करते हैं कि नहीं. समझमें आया?

ईसलिये यहां लिया है, ऐसी मिथ्या माया, मिथ्या श्रद्धा. अंदर मायाचार, दुनियाको धर्म मनाने अंदरमें कुछ माने, बाहरमें कुछ माने और लोकका रंजन. लोकरंजन. 'पाषंडी मूढ विश्वासं' ऐसाका कोई भी विश्वास करे, वह भी धर्मका करनेवाला है, वह भी धर्मी है, वह भी अेक विद्वान है, ऐसा मानकर उसका विश्वास करे, 'नरय ते पतंति' विश्वास करनेवाला नईमें जायेगा. है बैया उसमें? २४६.

पाषंडी वचन विश्वासं, समय मिथ्या प्रकाशनं।

जिन द्रोही दुर्बुद्धि, स्थानं तस्य न जायते।।२४६।।

क्या कला? देओ! अपनेको जबर नहीं तो दूसरेमें क्या जबर है उसको कि क्या चीज है. तो करते हैं, पाषंडी जवोके वचनोंका विश्वास करना. लान है नहीं और जहां-तहां धर्मके नाम पर विपरीत बात चलाये, ऐसा साधु हो या गृहस्थ हो, कोई भी. साधुका नाम पाषंडी ... सच्ये साधु हो तो भी उसे पाषंडी कहे. पाषंडी यानी .. ऐसा नहीं. समयसारमें आता है.

यहां करते हैं, गृहस्थ हो या विद्वान हो या त्यागी नाम धरानेवाला हो या साधु हो. पाषंडी साधुओके वचनोंका विश्वास करना, ये मला जिनद्रोही है. ऐसा विश्वास करनेवाला भगवानके मार्गका द्रोही है. है? जिन द्रोही. वह दुर्बुद्धि है. उसकी बुद्धि ठिकाने नहीं है, अज्ञान बुद्धि है. दुर्बुद्धि कलो या अज्ञान हो. मिथ्या आगमके मतका प्रकाश करना है. देओ! 'समय मिथ्या प्रकाशनं' समय यानी आगम. आगमका मिथ्या प्रकाश. वास्तविक आगम क्या है, उसका अर्थ क्या है, समझे बिना अपनी कल्पनासे उलटा आगमका अर्थ चला दे और मिथ्या आगमकी परंपरा चला दे. जिन द्रोही ऐसे पाषंडी साधु जिनेन्द्रके अनेकांत मतके शत्रु है. लिजा है? ईसमें लिजा है. बैया! लिजा है उसमें? शीतलप्रसादने लिजा है, हां! शीतलप्रसाद लुअे हैं न? अेक ब्रह्मचारी.

मुमुक्षु :- उसको तो मालूम है न.

उत्तर :- मैं तो दूसरेको समझनेको करता था. समझमें आया? समझमें आया कि नहीं? शीतलप्रसाद टिंगंवर ब्रह्मचारी लुअे हैं न. उन्होंने यह अर्थ लिजा है. है तारणस्वामीका पाठ. उसमें है, पाठमें ही है.

'जिन द्रोही दुर्बुद्धि' जिसको भगवान आत्मा भिन्न, रागसे भिन्न, आस्रवसे भिन्न,

ॡॡकी डरुडरुसे डुररु (ॡसकुर) डुररु नरुी है और डुररुवुररुके आगडुके नुररु डुररु दे कुररु आगडु ऐसुर कलते हैं, शुररु ऐसुर कलते हैं, ऐसुर ॡनदुरुरी और डुररु दुररु डुररु रडुनेवुररु 'सुथुरनं तसुडु न ॡरुडुते' कुररु (कलते हैं)? ॡसके सुथुरनडु न ॡनुर. है न? 'सुथुरनं तसुडु न ॡरुडुते'. डुररु नरुी है, ॡरुं-तरुं ॡनुर.

डुररुडु :- डुररु डुररुके डुररुडुडु ॡरुडु.

ॡतुर :- डुररु सडुथुरी है. है कुररु नरुी? डुररु! 'सुथुरनं तसुडु न ॡरुडुते' ॡनसकुरी डुररुडुडु शुररुदुररु वुररुडुडु है, आगडुसे वुररुडुडु है.. सडुडु? ॡसके वडुनकुर वुररुडुडुस कुररुनुर डुररु डुररु डुररुडुडु कुररुते हैं, ॡसकुर 'सुथुरनं तसुडु न ॡरुडुते'. ऐसे डुररुडुडी सुरुधुके सुथुरनडु ॡनुर डुररु ॡरुडुत नरुी. ॡसकुर सडुग कुररुनुर नरुी, सुडुडुत कुररुनुर नरुी, ॡसकुरी वुररुडुडुत रुरीतडु डुररु देगुर. ॡसकुरी दुररु वुररुडुडुत है. आगडुकुर अरुथ वरु वुररुडुडुत कुररुते हैं, ॡसे वुररुडुडुत रुरसुते डुररु डुररु देगुर. सडुडुडुडु आरुडु? डुररुत वुररुडु है. 'सुथुरनं तसुडु न ॡरुडुते'.

डुररुडु :- ...

ॡतुर :- वसुतुकुर सुवडुडु ऐसुर है. वरु तुरी डुररुडुडुडुडु सुडुडु कुररुते हैं. डुररु! .. नरुी है, ऐसुरी वसुतुकुरी सुथुरतुरी है. वसुतुकुरी डुररुडुडु है. डुररुवुररु नुररुवुररुनुररुथ अरुररुडुत, गुररुडुडु ॡरु कुरे ॡसके नुररु डुररु डुररुडुडु डुररुतुर डुररुवुररुनुर, कलते हैं कुररु वरु तुरी 'नरुडु ते डुररुतुररु'. और ॡसकुर वुररुडुडुस कुररुनेवुररु डुररु नरुडुडुडु ॡरुडुडुगुर. और 'सुथुरनं तसुडु न ॡरुडुते' ॡसकुर सडुग कुररुनुर नरुी. धुररुडुडुडु ऐसे सडुगडु, डुररुडुडुडुडु नरुी ॡनुर. नरुी तुरी वरु डुररु डुररुते डुररु डुररु देगुर. सडुडुडुडु आरुडु? अडु, २ॡॡ.

डुररुडुडी कुररुडुतुर अॡरुनुरी, कुररुलुररुगुरी ॡनुर उकुत लुररुडुनं।

ॡनुरलुररुगुरी डुररुशुरेन डुर, ॡनुर दुरुरी ॡनुर लुररुडुनं।२ॡॡ।

'डुररुशुरेन' शडुडु है? 'डुररुशुरेन' शडुडु है न? ॡनुरलुररुगुरीके सुरुथ अडुनेकुर डुररुवुररुनेकुर, ॡनुरलुररुगुरी दुररुडुडुनेके वुररुडु. आडु वुररुग, डुररुडुत वुररुग कलते हैं, ... नरुी? डुररुडुडुवुररु है, दुररुडुडुसे कुररु अडुडु डुररुडुडुवुररु है. तुरी थुररुडु ॡसे डुररुथरु सडुडुनुर डुररुडुडु, वुररुडुन कुररुनुर डुररुडुडु. ऐक-ऐक शडुडुडु गुररुडुडु कुररु डुररुडुडु कल है, ऐसे डुररुथरु न डुररु तुरी सुवुररुडुडी डुरी दुरुरी डुरी ॡनुर है. तुररुडुडुडुके नुररुडुसे डुररुवुररु और डुरी तुररुडुडुडुडु डुररुडु डुररुडुडु और डुररु डुररुडुडु. डुररुडुडुडु! डुरी ॡनुरदुरुरी डुररु, सुरुधु दुरुरी डुररु, गुररुडुडु सडुडुडुडुके दुरुरी डुररुगुर. सडुडुडुडु आरुडु?

डुररुडुडी सुरुधु कुररुडुतुर और कुररुडुतुर डुररु है. सडुडुडुडुनुर है नरुी. सडुडुडु शुररुत है नरुी. डुररुडु कलडुनुर और तुररु अडुनुर वुररुकुर ... है. डुररुडुडु .. है, डुररु डुरी दुररुडुडु है. डुररु डुरी दुररुडुडु नुररु कलडुनुर दुररुडुडु है. ॡनुरके सुवडुडुके वुररुडुनेवुररु है. वुरीतरुरग डुररुडुडु, ॡसकुरी नुररुडुडु सतुडु डुररुग ॡसकुर वुररुडुनेवुररु है. ॡरु ॡनुरलुररुगुरी अडुनेडु थुररुडु डुररुकुर, थुररुडु ऐसुर,

थोडा ऐसा (कहता है, वह) जिन भगवानका द्रोही होता है. सम्यग्ज्ञानको छिपा देनेवाला है. लोपका अर्थ. इसलिये उसका संग करना नहीं. उसकी पहले परीक्षा करनी चाहिये. कलौ, समझमें आया? २४८.

पाषंडी उक्त मिथ्यात्वं, वचनं विश्वास क्रियते।

तस्य ये सुदृष्टि, दर्शनं मल विमुक्तं॥२४८॥

पाषंडी भेषी साधुओ द्वारा कहे लुअे मिथ्यात्व पोषक वचनोंका विश्वास किये जाने पर शुद्ध आत्मिक सुदृष्टिका त्याग हो जाता है. यहां तो साधुका नाम है, परंतु कोई भी गृहस्थ हो, अज्ञानी हो,...

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- अस, 'उक्त मिथ्यात्वं'. वही भाषा उसमें थी न? पाषंडी मिथ्यात्व.

परंतु विपरीत मान्यतावाला. वास्तविक तत्त्व भगवान सर्वज्ञदेव कहे, अेक रजकणुकी भी किया आत्मा कर सकता नहीं. अेक राग दया, दानका उसका कर्तृत्व मानना वह भी मिथ्यात्व है. उससे विरुद्ध कहनेवाला अज्ञानी मिथ्यात्वका पोषक है. 'वचनं विश्वास' उसके वचनका विश्वास करना,... समझमें आया? 'तस्य ये सुदृष्टि' सुदृष्टि हो तो भी नाश हो जाती है. समझमें आया? सखी दृष्टि रहती नहीं. 'दर्शनं मल विमुक्तं' तो कैसा करना? उसको मल रहित सम्यग्दर्शन नहीं रहता. ऐसी श्रद्धा-विपरीत माननेवालेकी श्रद्धा करे, बहुमान करे, भक्ति करे तो उसको सख्या सम्यग्दर्शन रह सकता नहीं.

मुमुक्षु :- कृपासे इव हो जाये.

उत्तर :- धूलमें भी कृपासे इव होता नहीं. क्या कृपासे इव होता है? २५०.

ज्ञानं तत्त्वानि वेदंते, शुद्ध समय प्रकाशकं।

शुद्धात्मनं तीर्थं शुद्धं, ज्ञानं ज्ञान प्रयोजनं॥२५०॥

देओ! 'ज्ञानं तत्त्वानि वेदंते' ज्वादि सात तत्त्वोंका ज्ञान करके आत्माका यथार्थ अंदर अनुभव करना-वेदन करना. सातका ज्ञान सम्यक् चैतन्यकी ओर जुकनेसे होता है. और उससे ज्ञानका वेदन करना, अनुभव करना. निर्विकल्प शांति, सम्यग्दर्शनका वेदन करना. समझमें आया? और 'शुद्ध समय प्रकाशकं'. शुद्ध निर्दोष .. प्रकाशक हो. समझमें आया? शुद्ध निर्दोष पदार्थ कहते हैं और शुद्ध तत्त्वका प्रकाश कहते हैं. 'शुद्धात्मनं तीर्थं' ऐसा शुद्ध तीर्थ स्वरूप शुद्धात्माका जलकानेवाला हो. जैसे ज्ञानको सम्यक्ज्ञान कहते हैं. शुद्ध तीर्थस्वरूप आत्मा है. बाह्य तीर्थ व्यवहार है. समझमें आया? बाह्य तीर्थ व्यवहार है. ... मोक्षका कारण है और उससे कमसे मोक्ष होगा, ऐसा नहीं है. समझमें आया? लोग कहते हैं न, जाओ भैया! समेदशीजरका दर्शन करो, भवका नाश हो जायेगा. शत्रुंजयका, गिरनारका. भगवान ना कहते हैं कि हम ऐसा कहते नहीं. हमारी वाणीमें ऐसा आया नहीं. शुभबंध

होता है, पुण्यबंधका कारण तीव्र कषायसे बचनेको ऐसा शुभभाव ज्ञानीको भी होता है. परंतु शुद्ध तीर्थ अपने स्वरूपका उलकानेवाला ज्ञान, चिदानंद ज्ञान, ज्ञायक स्वभावका प्रकाश करनेवाला वही ज्ञान शुद्ध तीर्थ है. समझमें आया?

व्यवहार है, व्यवहारके स्थानमें व्यवहार है, नहीं है ऐसा नहीं. अपने शुद्ध स्वरूपका ज्ञान, उसके भानमें जब स्थिर हो सकते नहीं, भान होनेपर भी, भक्ति, पूजा, तीर्थ, यात्रा होती है. लेकिन उसकी मर्यादा, मर्यादा-उसकी सीमा रागकी भंदा होना, पुण्यबंधका होना उतनी उसकी सीमा है. उससे आगे जाकर जो आत्माका विशेष लाभ बताते हैं उसमें लाभ होगा नहीं. मिथ्यादृष्टि है. समझमें आया? दृष्टिका ठिकाना नहीं. दृष्टि जहां सत्य नहीं है, वहां व्रत और नियम कोई भी सच्चा होता नहीं. समझमें आया?

ज्ञानसे ज्ञानकी उत्पत्तिका ही प्रयोजन हो, वही ज्ञानाचार है. देओ! क्या कहते हैं? जो सम्यग्ज्ञानमें सात तत्त्वका वेदन है, शुद्ध शास्त्रका प्रकाशन हो, शुद्धात्मा तीर्थ शुद्धको उलकानेवाला हो और 'ज्ञानं ज्ञान प्रयोजन'. जिस ज्ञानमें अपना केवलज्ञान प्रगट करना ही प्रयोजन हो. समझमें आया? अपने सम्यग्ज्ञानसे केवलज्ञान प्रगट करना वह प्रयोजन है. कोई दुनियाकी ईच्छत लेनी या दुनिया भुश हो, ऐसा प्रयोजन है नहीं. उसके ज्ञानको सम्यग्ज्ञान कहते हैं. समझमें आया? 'ज्ञानं ज्ञान प्रयोजन' ज्ञानकी उत्पत्तिका ही ज्ञानसे प्रयोजन हो. दूसरा कोई प्रयोजन नहीं. अपना शुद्ध सम्यग्ज्ञान ऐसा होता है कि ज्ञानसे ज्ञानकी अठवारी-वृद्धि होती-होती केवलज्ञान हो जाये. दूसरा कोई काम नहीं है. ज्ञानसे कुछ पुण्य बंध जाये, या दुनियामें ईच्छत मिल जाये, दुनियामें बडा कलनेमें आये, ऐसी भावना हो तो सम्यग्ज्ञान है ही नहीं. ज्ञानका ज्ञानसे प्रयोजन हो. समझमें आया? २५० (दुई). २५१ वो.

ज्ञाने ज्ञानमालंबनं, पंच दिप्ती प्रस्थितं।

उत्पन्नं केवलज्ञानं, सार्धं शुद्ध दृष्टितं॥२५१॥

सम्यग्ज्ञान श्रुतज्ञानके द्वारा. सम्यग्ज्ञान आत्मज्ञान, हां! शुद्ध. आत्मज्ञानको दृढ करना ही चाहिये. शुद्ध सम्यग्ज्ञान द्वारा आत्मज्ञानको दृढ करना चाहिये. अपना आत्मा निर्विकल्प शुद्ध है, उसकी श्रद्धा और ज्ञानको सम्यग्ज्ञान द्वारा दृढ करना चाहिये. पांच प्रकार ज्ञानोंके भीतर श्रेष्ठरूपसे स्थित जो केवलज्ञान. पांच ज्ञानमें भी ओक केवलज्ञान. केवलज्ञान प्रगट हो जाये वह बात ज्ञानमें आनी चाहिये. आहाहा..! समझमें आया?

साथ ही शुद्ध आत्मिक प्रत्यक्ष दर्शन हो जाये. उसका नाम ज्ञान कलनेमें आता है. 'ज्ञाने ज्ञानमालंबनं'. देओ! अकेला सम्यग्ज्ञान चैतन्य निर्मल विकल्प रहित जो सम्यग्दर्शनमें ज्ञान हुआ, उसके आलंबनसे केवलज्ञान प्रगट हो और पांच ज्ञानमें उसकी अधिकता हो, उसका नाम शुद्ध दृष्टि कलनेमें आता है. अथवा शुद्ध आत्मिक प्रत्यक्ष दर्शन हो जाये जिस ज्ञानसे, उस ज्ञानका नाम ज्ञान है. दुनियाको समझना आये या नहीं आये, उसके साथ

संबंध है नहीं। समझमें आया? एजरो लोकोमें बोलने आता है, समझता है। क्या है? भाषा बडकी है, आत्माको क्या है उसमें? उसका सम्यग्ज्ञान अंदरमें अपने ज्ञानकी पूर्णता करनेमें प्रयोजन हो, उसके ज्ञानको ज्ञान करनेमें आता है। सम्यग्ज्ञानी हो, उसे कुछ बोलना भी नहीं आता हो। समझे? ऐसा है। मंडुक-मेंढक। मेंढक समझिती होता है। और जैन साधु होकर मिथ्यादृष्टि होता है। अनंत बैर नौवीं त्रैवेयक गया। 'मुनिव्रत धार अनंत बैर त्रैवेयक उपजयो, पण आत्मज्ञान बिन बेश सुभ न पायो।' सम्यग्दर्शनका भान नहीं और मुनिव्रत अंदर अनंत बैरे धारे, उससे कोई आत्माका लाभ है नहीं। और मेंढक है, चीडिया... क्या करते हैं? चकवा। वह भी भगवानके समवसरणमें सम्यग्दृष्टि होता है। सुना है? सम्यग्दृष्टि, यहां करते हैं ऐसा।

मुमुक्षु :- सालभ! वैसा ज्ञान कहां लेने जाना?

उत्तर :- ज्ञान आत्मामें है। कहां लेने जाना है? जयचंद्रभाई! ज्ञान बाहरसे नहीं आता, ऐसा करते हैं। अंदर भरा है। केवलज्ञानका कंद प्रभु आत्मा है। ज्ञान बाहरसे आता है? पुस्तक पत्रोंमेंसे आता है? आलाला..! विश्वास नहीं है, विश्वास। समझमें आया?

आत्मा सख्यदानंद प्रभु, 'सिद्ध समान सदा पद मेरो' मेरे स्वप्नमें सिद्धपद है। मैं ज्ञानका पूर्ण भंडार हूं। ऐसा अनुभव करना सम्यग्दर्शनमें उससे ज्ञानकी सम्यक्ता प्रगट होती है। बाह्य क्रियाकांड प्रवृत्तिसे कोई सम्यग्ज्ञान होता नहीं। समझमें आया? आत्मज्ञानसे केवलज्ञान लेना, वह उसका प्रयोजन है। दूसरा कोई प्रयोजन है नहीं। समझमें आया? अवधि, मनःपर्यय हो या नहीं हो, उसके साथ संबंध नहीं है। मति-श्रुत सम्यग्ज्ञान हुआ अंतरमें सम्यग्दर्शन पूर्वक, तो उसका प्रयोजन केवलज्ञान ही है। दूसरा कोई प्रयोजन है ही नहीं। स्वर्ग मिलेगा, ऐसा मिलेगा, तीर्थकर गोत्र बांधेगा, ये प्रयोजन नहीं है, ऐसा करते हैं। समझमें आया? बीचमें विकल्प आ जाये और बंध जाये, लेकिन ज्ञानीका वह प्रयोजन नहीं है। ज्ञानीका सम्यग्दृष्टिका प्रयोजन अपने ज्ञानसे ज्ञानकी वृद्धि होकर केवलज्ञान हो जाये, बस! ये सम्यग्दृष्टिका प्रयोजन और हेतु है, दूसरा कोई हेतु है नहीं। समझमें आया? रपर. देजो आया. कल कल था न? आंभकी बात कहीं (आती) है।

ज्ञानं लोचन भव्यस्य, जिन उक्तं सार्थं ध्रुवं।

सुयं तत्त्वानी विज्ञानं, सुदृष्टि समाचरतु।२५२॥

अहो! भव्य जवकी आंभ तो ज्ञान है। देजो! ये आंभ नहीं। ... नहीं। आत्मा ज्ञानमूर्ति परमानंदका जिस ज्ञानसे भान हो, वह ज्ञानलोचन भव्यजवको होता है। ये भव्यजवकी आंभ है। समझमें आया? आलाला..! देजो! भव्य जवकी आंभ ज्ञान है। जो यथार्थ है, निश्चल है। जो ज्ञान यथार्थ है और निश्चल है। 'सार्थ' (अर्थात्) यथार्थ। 'ध्रुवं' (अर्थात्) निश्चल। 'जिन उक्तं' ऐसा जिनेन्द्रने कहा है। जिसकी ज्ञान सम्यक् चैतन्यकी आंभ प्रगट

हो गयी, वही उसकी आंख है-वही उसका ज्ञान है. ऐसा त्रिलोकनाथ जैन परमेश्वरने कला. दूसरा ज्ञानपना हो, न हो, संस्कृत, व्याकरण बोलना, ऐसा-वैसा (नहीं हो), परंतु जिसको अंदर सम्यग्ज्ञान नेत्र भुल गये हैं, उसको ज्ञान कहते हैं और उसकी आंख सम्यग्ज्ञानकी आंख है. समझमें आया?

‘सुदृष्टि’ सम्यग्दृष्टि जव श्रुतज्ञानके द्वारा तत्त्वोंका विशेष ज्ञान प्राप्त करे. सम्यग्दृष्टि तो जव अपने भावश्रुतज्ञान द्वारा, भावश्रुतज्ञान द्वारा सम्यग्दर्शनकी प्रतीतमें जो सारा आत्मा आया है, उसमें भावश्रुत निर्मल द्वारा सर्व तत्त्वोंका विशेष ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं. उसको सम्यग्ज्ञान कहते हैं. कलो, समझमें आया? बीचमें वह बात तो आ गयी, २५४-२५५ (गाथाकी). आचरणकी बात आयी न? थोड़ी यहां पात्रदानकी बात लेनी है. २६२. २६२, लो.

ओमकारं च वेदंते, हीकार सुत उच्यते।

अचष्युदर्शन जोयंते, मध्य पात्र सदा बुधै।।२६२।।

.. सत्य तत्त्वं वेदंते, ऐसा लिया है. यहां ‘ओमकारं च वेदंते’ आया है. बात तो अंदर भावश्रुतज्ञान वेदनकी है. धर्मीजव तो अपने आत्माको अंदर अक्षु द्वारा देखते हैं. समझमें आया? श्रावक ओमकारका अनुभव करते हैं. ओमकार शब्दका नहीं, हां! विकल्प नहीं. ओममें कला है ऐसा आत्माका भाव. और ‘हीकार’ बीजक्षरका उच्यरण करते हैं. अंदर आत्मा केवलज्ञानका बीज है उसका ज्ञान करते हैं. और अक्षु दर्शन द्वारा आत्माको देखते हैं. उनको ही आचार्यने सदा मध्यम पात्र कला. देखो! आहार लेनेमें मध्यम पात्र वह है. जघन्य यौथा गुणस्थान है न. मध्यम है, और उत्कृष्टि मुनिका है.

अक्षुदर्शनं. यहां श्रावकाचार है कि नहीं? अपने आत्माको अक्षुदर्शनसे देखते हैं. ओलो..! आता है न परमात्म प्रकाशमें? भाई! परमात्म प्रकाशमें. अक्षुदर्शन. ये सब शब्द जिनागमके ही हैं. परमात्म प्रकाशमें योगीन्द्रदेवने कला है. आत्माको अक्षुदर्शन द्वारा देखते हैं. मावूम है? नहीं मावूम. हां तो कले, क्या करे. पढनेका समय नहीं मिलता, ... आडे. कलो, समझमें आया? भाई! परमात्म प्रकाशमें आता है न? परमात्म प्रकाशमें. शिष्यने प्रश्न किया, अक्षुदर्शन क्या है? अक्षुदर्शन तो अभाविको भी होता है. अक्षुदर्शन यदि लो तो निगोदको भी अक्षुदर्शन है, अभाविको भी अक्षुदर्शन है. समझमें आया? इसलिये यह गाथा ली है.

अक्षुदर्शन क्या? अक्षुदर्शन तो अभाविको भी अनादिसे है. निगोदको भी अक्षुदर्शन है. अक्षुदर्शन बिनाका कोई प्राणी होता ही नहीं. लेकिन यह अक्षुदर्शन दूसरा है. इस आंभके बिना अंतर सम्यग्ज्ञानसे आत्माको देखना उसका नाम अक्षुदर्शन कहनेमें आया है. पंडितज! कोई-कोई गाथा ऐसी है. जास लेनेको ज्याल आवे कि कैसा अर्थ लरा है उसमें. समझमें आया?

मुमुक्षु :- ...

उत्तर :- फिरसे कहते हैं. औसा कहते हैं कि, प्रभु कहते हैं कि भाई! तेरा प्रभुत्व स्वभाव अंदर अनंत गुणका भंडार पडा है. उसका अंतर ज्ञान, दर्शन, जिसमें ये यक्षु नहीं है, ये स्पर्श नहीं, कोई इंद्रिय नहीं. अतीन्द्रिय जैसे अयक्षुदर्शन द्वारा आत्माको देखना. समझमें आया? अंदर अयक्षु यानी ये यक्षु नहीं. सम्यग्दर्शन द्वारा आत्माको देखना, सम्यक् लोचन द्वारा आत्माको देखना उसका नाम अयक्षुदर्शनसे देखा औसा कहनेमें आता है. मिथ्यादृष्टिको अयक्षुदर्शन है, उसमें क्या आया? यक्षु, अयक्षुदर्शन है न? वह तो अभाविको भी होता है, अनादि निगोदमें भी है, अयक्षुदर्शन. फिर यौंन्द्रिय होता है तब यक्षुदर्शन होता है. वह नहीं.

यहां तो अंतरकी आंभ. पांच इंद्रिय भी नहीं, मन भी नहीं. पांच इंद्रिय नहीं, मन नहीं. समझमें आया? जैसे अंतर ज्ञानकी पर्याय द्वारा आत्माको देखना, अनुभवना, प्रतीत करना उसका नाम 'अचष्युदर्शन जोयंते' है. समझमें आया? देखते हैं. .. देखते हैं. कौन-सी आयी? २६६. थोड़ी २६६ वो. अविरती सम्यग्दृष्टि है न? २६६.

मिथ्या त्रिविध न दृष्टंते, सत्य त्रय निरोधनं।

सुयं च सुद्ध द्रव्यार्थ, अविरत सम्यक्दृष्टिं॥२६६॥

अविरत सम्यग्दृष्टि यौथे गुणस्थानवाला. यहां पात्र गिनना है न? तो पात्र कैसा अविरत सम्यग्दृष्टि? उसका लक्षण बताया. अविरत सम्यग्दृष्टि. अंतरमें अभी आसक्तिका त्याग नहीं है. अंदर स्वप्नकी स्थिरता-चारित्र आदि नहीं है. लेकिन 'मिथ्या त्रिविध न दृष्टंते' जिसमें मिथ्यात्वभाव, मिश्रभाव, समकितमोहनीभाव है नहीं. मिथ्यात्वकी तीन प्रकृति है. उसका भाव भी आत्मामें तीन प्रकारका होता है. मिथ्यात्व, मिश्र और समकित. ये तीन प्रकारका भाव सम्यग्दृष्टिको होता नहीं. यहां तो उत्कृष्ट बात करते हैं. समझमें आया?

सम्यग्दृष्टिको.. देओ! यह पंचमआराकी बात करते हैं. पंचमआराकी बात है न, ये कहां चतुर्थकावकी बात है. .. समकितमोहनी थोडा है, लेकिन दृष्टिमें देखते नहीं. त्रिकाव ज्ञायक शुद्ध अनाकुल आनंद ज्ञानका पिंड निर्मल, औसा सम्यग्दृष्टिको तीन मिथ्यात्वसे रहित आत्मा दिखता है.

'सत्य त्रय निरोधनं' समकितकी तीन प्रकारका ... है. मिथ्यादर्शन है नहीं, मिथ्याश्रद्धा उसे है नहीं, मिथ्यात्व, निदान शल्य है नहीं, माया शल्य है नहीं. समझमें आया? निःशल्यो प्रती. आता है कि नहीं? तत्त्वार्थ सूत्रमें आता है. निःशल्यो प्रती. मिथ्यात्व है, माया शल्य है तबतक प्रत-इत कहांसे आया? दृष्टिमें तो मालूम नहीं है कि आत्मा क्या, पुण्य क्या, दया क्या, .. क्या, जड क्या, परिपूर्ण क्या, कैसे ज्ञानसे क्या प्राप्त होता है, मालूम नहीं. उसको प्रत-इत कहांसे आया? किया कहांसे आयी यथार्थ ज्ञान बिना?

कहते हैं, तीन शल्य रहित. निःशल्यो प्रती. मिथ्याशल्य, निदानशल्य और मायाशल्य

रहित हो तो व्रतभाव पंचम गुणस्थान आता है. नहीं तो पंचम गुणस्थान आता नहीं. ओहोहो..! ये श्रावकाचारकी बात चलती है. पंचम गुणस्थानका आचार कैसा है ये चलता है. उसमें तीन प्रकारका शल्य नहीं होता है. मिथ्यात्वका तीन भाव-समकित मोहनी, मिश्र, 'सुयं च सुद्ध द्रव्यार्थ'.

'सल्य त्रय निरोधनं' कहा न? रोकता है. और श्रुतज्ञानी है. सम्यग्दृष्टि श्रुतज्ञानी है. भावज्ञानी है. भावआत्माका ज्ञान और भास हुआ है, चिदानंद (हूं). जैसे भावश्रुतज्ञानको सम्यग्दृष्टि कहते हैं. भले अप्रती हो. समझमें आया? अविरत लेते हैं न? देओ! मूलमें लिया है. अविरत सम्यग्दृष्टिका भगवान त्रिलोकनाथ परमात्माने लक्षण कहा, वह लक्षण यहां कहनेमें आता है. वह शास्त्रमें बहुत चलता है. शुद्ध द्रव्यार्थिकनयको समजता है. द्रव्यार्थिक है कि नहीं? सम्यग्दृष्टि जोव शुद्ध द्रव्यार्थिकनय आत्मा अकल्प द्रव्यार्थिक-द्रव्य जिसका अर्थ-प्रयोजन है, जैसे ज्ञानसे आत्मा कैसा है, शुद्ध द्रव्यार्थिकनयसे द्रव्यदृष्टिसे आत्माको जानते हैं. समझमें आया? एक समयकी पर्याय, दया, दानका विकल्प और निमित्त, वह द्रव्यार्थिकनयका विषय नहीं है. वह पर्यायनयका विषय है, व्यवहारनयका विषय है. उसको ज्ञानी जानते हैं. आदरणीय द्रव्यार्थिकनयका विषय (है). द्रव्यार्थिक किसे कहना और विषय किसे कहना? क्या होगा?

शुद्ध द्रव्यार्थिक कहा न? देओ न! शुद्ध द्रव्य अर्थ. जिसको शुद्ध द्रव्य प्रयोजन है लक्ष्यमें. फिर द्रव्यार्थिकनय कहा. अर्थी. अर्थी यानी प्रयोजन. एक भगवान परिपूर्णा आत्मा द्रव्यदृष्टिमें आता है, द्रव्यार्थिकनयका विषय है, वही सम्यग्दृष्टिका प्रयोजन है. समझमें आया? कहां गठ पर्याय? जाये कहां? होती है, वह व्यवहारसे जाननेलायक है, आदरनेलायक नहीं है. सम्यग्दृष्टिको अपनी पर्याय निर्मल हो वह भी आदरणीय नहीं. क्योंकि पर्यायमेंसे निर्मल पर्याय होती नहीं. समझमें आया? पर्याय कौन और द्रव्य कौन? (ईसकी जबर नहीं).

नियमसारमें तो कहते हैं कि, सम्यग्दृष्टिक क्षायिक समकित पर्याय दुर्घ, क्षायिक समकित, समझमें आया? लेकिन उसका प्रयोजन द्रव्य पर है, ध्रुव पर है. वह क्षायिक समकितको भी नियमसारकी प०वीं गाथामें परद्रव्य कहा है, ह्ये कहा है और परभाव कहा है. ये क्या आ गया? भाई! 'सुयं च सुद्ध द्रव्यार्थ' शब्द पडा है न? सम्यग्दृष्टिका विषय द्रव्य है. त्रिकाल ज्ञायक अजंजानंद पूर्ण वस्तु. पर्यायमें क्षायिक समकित हो, अरे..! मुनि हो छठे गुणस्थानमें तीन कषायका अभाव होकर चारित्रदशा हो, वह भी सब व्यवहारमें जाता है. क्या? समझमें आया? पंडितज!

राग, दया, दान, अठ्याईस मूलगुण तो विकल्प है, वह तो व्यवहारमें है ही. लेकिन अपनी पर्यायमें जितनी शांति और चारित्र सम्यग्दर्शनपूर्वक प्रगट दुर्घ, वह भी निश्चय दृष्टिके विषयके आगे वह व्यवहारनयके विषयमें जाता है. बहुत समजना पडेगा. डालचंदज!

ऐसे उपर-उपरसे पैसा मिल गया, वैसे ये चीज नहीं मिलेगी. प्रयत्न करना पड़ेगा.

मुमुक्षु :- ...

उत्तर :- कुछ महेनत करता नहीं. उससे भी ज्यादा महेनत करते हैं, कुछ मिलता नहीं. क्यों सेठ? आपसे अधिक महेनत करनेवाले दूसरे बहुत हैं कि नहीं? कुछ नहीं मिलता. आपको पैसा मिला तो क्या तुम्हारी महेनतसे मिला है?

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- .. कौन? मोही प्राणी राग किये बिना रहे नहीं. मोही प्राणी है तो राग लुभे बिना रहता है उसको?

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- मिलना, नहीं मिलना कोई रागके पुरुषार्थसे मिलता नहीं. समझमें आया? देओ! अविरत सम्यग्दृष्टि व्याख्या. उसको अविरत चौथा गुणस्थानवाला सम्यग्दृष्टि कहते हैं, जो मोक्षमार्गकी पहली सीढ़ी (है). मोक्षमार्गकी पहली सीढ़ी.

‘सुयं च सुद्ध द्रव्यार्थ’ अपना द्रव्य परिपूर्ण जिसकी दृष्टिमें है. अपनी प्रगट लुयी निर्मल पर्याय सब व्यवहार है, लेय है. उपादेय नहीं, आदरणीय नहीं. परद्रव्य है, परभाव है. किस अपेक्षासे? त्रिकाव द्रव्य पर दृष्टि देनेसे यह पर्याय प्रगट होती है. निर्मल पर्याय प्रगट लुई उसमेंसे नयी निर्मल पर्याय नहीं आती. समझमें आया? बहुत सूक्ष्म, भाई! इसमें सूक्ष्म आया, द्रव्यार्थिक. सम्यग्दृष्टिका प्रयोजन अंक शुद्ध द्रव्य (है). पर्याय है सही, नहीं है ऐसा नहीं, नास्ति नहीं है, ज्ञान करने लायक है, ज्ञानने लायक है. शुद्ध द्रव्य ज्ञायकस्वभाव अकरूप अण्ड, जैसा केवलज्ञानीने देओ, ऐसी प्रयोजन दृष्टिमें द्रव्यार्थिकनयका विषय है. ऐसा माननेवाला, ज्ञाननेवाला, उसको ‘अविरत सम्यक्दृष्टितं’ अविरत सम्यग्दृष्टि होता है. समझमें आया? बहुत अच्छी बात कही है. ... अब ज्ञानमें कथनशैली समझनी है. २७२.

पात्र दानं च शुद्धं, कर्म क्षिपन्ति सदा बुद्धैः।

जे नरा दान चिंतते, अविरत सम्यक्दृष्टितं।२७२।।

अंक और जगल आता है, ‘अविरत’ आता है. २७८में आता है, उसके साथ मिलान करना है. कथन पद्धति थोड़ी ऐसी है तो ध्यान रचना. चौथे गुणस्थानवाला अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थाश्रममें रहता है फिर भी कैसा होता है?

सदा बुद्धिमानोंके द्वारा दिया हुआ शुद्ध पात्र दान. ऐसा सम्यग्दृष्टि-बुद्धिमान नाम सम्यग्दृष्टि, उसके द्वारा दिया हुआ शुद्ध पात्र दान. शुद्ध सम्यग्दर्शन सामने हो, मुनि हो, सम्यग्दृष्टि सच्ये ज्ञानी पात्र हो, दान देनेमें ‘कर्म क्षिपन्ति’ वह पापकर्मका क्षय करता है, ऐसा लेना. निर्जरा करता है ऐसा नहीं लेना. समझमें आया? देओ! २७८ में लिया

है. २७८ है न?

पात्र दानं च भावेन, मिथ्यादृष्टि च शुद्धये।

भावना शुद्ध संपूर्ण. दानं फलं स्वर्ग गामिनना॥२७८॥

शुद्ध तो अेक अपेक्षासे शुभभाव है उतनी बात है. समजमें आता है? शुद्ध आत्माकी भावनासे (परिणत) सम्यग्दृष्टिको ... स्वर्गगमन है. मूल तो पुण्यबंध होता है. सम्यग्दृष्टिको, सख्ये सम्यग्दृष्टिको संतोंको आहार देनेका भाव पुण्यबंधका ही कारण है. संवर, निर्णराका कारण नहीं. समजमें आया? पहले बात आ गयी है परसों. परद्रव्य चिंतये. परद्रव्य चिंतये आया है न? आ गया है. जितना परद्रव्यका चिंतन, विकल्प, परद्रव्य अपेक्षासे आते हैं, सब पुण्यबंधका (कारण है). कर्म पर लक्ष्य हो तो पुण्यबंध कला है. स्त्री-कुटुंब, परिवार पर लक्ष्य जाता है तो पापपरिणाम है. कोई उसमें अबंध परिणाम, परद्रव्यके आश्रयसे विकल्प है उसमें अबंध परिणाम कभी होता नहीं.

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- सिद्धोंका ध्यान. सिद्ध परद्रव्य है. जितना विकल्प उठता है उतना पुण्यबंधका कारण है. अपने स्वर्पकी अंतर अेकाग्रता संवर, निर्णराका कारण है. वह पहले कला था. पहले गाथामें (आ गया है), परद्रव्य न चिंतये. सिद्ध भी परद्रव्य है. अपना द्रव्य है नहीं. समजमें आया? परद्रव्य, पहले आया था न? अेक गाथामें आ गया. परद्रव्यं न चिंतये. १८४ गाथा. अपने आ गयी है. इसमें थोडा-थोडा विभ विधा है. सब नहीं रहता इसलिये थोडा-थोडा विभ विधा. सेठ आये तब कला था न? सेठ! पहले सब देभ विधा था. १८४ है, देभो!

आत्मा सद्भावं आरक्तं, परद्रव्यं न चिंतये।

ज्ञानमयो ज्ञान पिंडस्य, चेतयंति सदा बुद्धै॥१८४॥

है न? परद्रव्यकी चिंता न डीजाये. परद्रव्य कोई भी हो, अपने द्रव्य सिवाय. परद्रव्यका लेट लक्ष्यमें आया (उसमें) विकल्प उठता है, वह पुण्य है. आलाहा..! लोगोंको सत्य धर्म क्या चीज है, उसकी पीछान भी नहीं, श्रद्धाका ठिकाना नहीं, सम्यग्दर्शन तो कहां रहा? और धर्म मान ले. अनादिकावसे अैसा .. है. है न? 'आत्मा सद्भावं' अपने सद्भावमें 'आरक्तं'. 'परद्रव्यं न चिंतये, ज्ञानमयो ज्ञान पिंडस्य'. अकेला ज्ञानमय आत्मा. अपना चिंतये नाम अनुभव करना. चिंतयेका अर्थ विकल्प करना अैसा नहीं है. 'सदा बुद्धै' देभो! 'सदा बुद्धै' ज्ञानीको सदा अपने द्रव्यका आश्रय करके लीनता करनी. 'सदा बुद्धै'. 'बुद्धै' यानी ज्ञानी सम्यग्दृष्टि. समजमें आया? कितने अर्थ समजना, इसमें कितना याद रचना अेक घंटेमें. भाई! तेरेमें तो केवलज्ञान लेनेकी ताकत है. भापू! तू प्रभु है. ये तो प्रभु होनेकी बात है. आलाहा..! क्या कला? कौन-सी चलती है? २७२. उसमें २७८ ली.

पात्रदान करनेसे, उसकी भावना करनेसे मिथ्यादृष्टिकी शुद्धि हो सकती है. उसका अर्थ शुभभाव, हां! यहां शुद्धिका अर्थ संवर-निर्जरा होती है ऐसा नहीं. मिथ्यादृष्टि हो.. समझमें आया? मिथ्यादृष्टि भी सच्चे ज्ञानीको दान करे तो वह शुभ विकल्प है. समझमें आया? परद्रव्यका आश्रय जितना हो उतना विकल्प है. सम्यग्दृष्टिको भी पात्रदानमें विकल्प ही है. और शुद्धात्माकी भावनासे परिपूर्णा सम्यग्दृष्टि है. उनको पात्रदानका इव स्वर्गगमन है. समझमें आया? ..२७८. 'कर्म क्षिपंति' लिया है अर्थात् वह संवर, निर्जरा करे, ऐसा नहीं है. पापकर्म क्षय होता है, ऐसा अर्थ लेना. और पुण्यबंध होता है तो स्वर्गमें जाते हैं, ऐसा लेना. समझमें आया?

एक ओर परद्रव्यके चिंतनसे राग और एक ओर परद्रव्यको आहार देनेसे कर्म क्षय हो, ऐसा है ही नहीं. वह तो पापका परिणाम लठ जाते हैं, पुण्य परिणाम होता है तो उतना पाप भिरता है. बाकी उसमें... विभा न? 'पात्र दानं च भावेन'. 'भावना शुद्ध संपूर्ण' सम्यग्दृष्टि 'दानं फलं स्वर्गं गामिनन'. स्वर्गमें जायेगा. समझमें आया? पाप नहीं होता. उसमें लगा दे कि गुरुको आहारदान देनेसे भवका नाश हो जायेगा, परित संसार हो जायेगा, कभी नहीं. आहाहा..! व्यवहार पराश्रित क्या है, स्वाश्रित क्या है, (उसे समझे) बिना वीतरागमार्गमें गडबड हो जाये. समझमें आया? अपनी स्वच्छंदतासे अर्थ करे तो शास्त्रका विरोध हो जाये. २७२.

'पात्र दानं च शुद्धं, कर्म क्षिपंति सदा बुद्धै'. देजो! 'जे नरा दान चिंतते'. सम्यग्दृष्टिको भावना होती है. भरत चक्रवर्ती जैसा छल भंडका धनी क्षायिक समझिती. आहारके समय.. ओहो..! सम्यग्दृष्टि मुनि संत भावविंगी हमारे आंगनमें कल्पवृक्ष कहां! सम्यग्दृष्टि सम्यग्दृष्टि मुनिकी भावना करते हैं. बडा अंगला है. चक्रवर्ती है न. ईन्द्र जैसा तो अंगला होता है. ... रत्नकी पहनकर बाहर निकले. अंगला तो बहुत दूर है. दरवाजे (उतने हैं). बाहर निकलकर (भावना भाते हैं), अरे..! कोई मुनि.. भावविंगी संत, हां! सम्यग्दृष्टि अनुभवी जैसी भावना करते हैं कि हमारे.. तभी उपरसे मुनि उतरते हैं. उतरते हैं. ओहो..! आज मेरा आंगनमें कल्पवृक्ष आया. उतनी शुभभावकी भक्ति सम्यग्दृष्टिको आये बिना रहती नहीं. लेकिन वह शुभभाव है. वह संवर, निर्जरा नहीं. वह बात समझनेकी है. इसलिये वह गाथा ली थी.

'जे नरा दान चिंतते, अविरत सम्यक्दृष्टितं'. उसको अविरत सम्यग्दृष्टि कहते हैं. दानकी भावना होती है. मुनिको दान, समझितीको समझिती दे, समझिती श्रावकको दे, समझिती मुनिको दे. जैसी भावना है. परंतु वह सब पापका थोडा क्षय होता है, पुण्यका बंध होता है. दृष्टि स्वभाव पर है. जितनी अकाग्रता स्वभावमें (है), उतनी संवर, निर्जरा होती है. (समय) हो गया... (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)